❖ नवम अध्याय

उपसंहार

क – वत्सराज उदयन पर आधारित प्रमुख संस्कृत रूपकों का संस्कृत साहित्य में स्थान

ख – वत्सराज उदयन पर आधारित प्रमुख संस्कृत रूपकों के रूपककारों का संस्कृत साहित्य में स्थान

(क) वत्सराज उदयन पर आधारित प्रमुख संस्कृत रूपकों का संस्कृत साहित्य में स्थान

प्राचीन काल से ही संस्कृत भाषा विश्व की सर्वोत्कृष्ट भाषा रही है। संस्कृत भाषा का महत्त्व अत्यधिक रहा है। संस्कृत नाट्य साहित्य अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि का है। अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण अनेक संस्कृत भाषा के नाट्य प्रसिद्ध हुए। संस्कृत नाट्य साहित्य में अभिज्ञानशाकुन्तलम्, उत्तररामचरितम्, मृच्छकटिकम्, स्वप्नवासवदत्तम्, रत्नावली आदि अनेक उत्कृष्ट नाट्य कृतियाँ उपलब्ध है, जिनका संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान है। स्वप्नवासवदत्तम्, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रत्नावली, प्रियदर्शिका और तापसवत्सराज आदि रूपकों का भी संस्कृत साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। रूपकों की उपयोगिता को निरूपित करने वाली विशिष्ट विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार है–

स्वप्नवासवदत्तम् एवं प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् का संस्कृत साहित्य में स्थान

स्वप्नवासवदत्तम् तथा प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् का संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान है। इनकी कथावस्तु के संयोजन में कविवर भास की मौलिकता का भी पूर्ण योगदान है। कुछ विशेषताओं को छोड़कर नाटक तथा प्रकरण की समान विशेषताएं होती हैं।

1. महाकवि भास ने **"नान्द्यन्ते ततः प्रविशति सूत्रधारः"**[1] इन शब्दों से रूपक का प्रारम्भ करने के पश्चात् संस्कृत कवियों के समान ही नाट्य परम्परा के अनुरूप सूत्रधार के मुख से कथावस्तु के प्रारम्भ में अपनी कृतियों की निर्विघ्न समाप्ति के लिए मंगलाचरण का विधान किया है–

उदयनवेन्दु सवर्णा वासवदत्ताबलौ बलस्य त्वाम्।
पद्मावतीर्ण पूर्णौ वसन्तकम्रौ भुजौ पाताम्।।[2]
पातु वासवदत्तायो महासेनोऽति वीर्यवान्।
वत्सराजस्तु नाम्ना सशक्ति र्यौगन्धरायणः।।[3]

उक्त श्लोक में क्रमशः भगवान् बलराम एवं भगवान् कार्त्तिकेय की कामना की गयी है।

2. संस्कृत रूपकों का प्रधान लक्षण है, रसों की अनुभूति, सम्यक् उद्‌बुद्धि और परिपाक। इसलिए कहा है – **वाक्यं रसात्मकं काव्यम्।**[4] संस्कृत नाटकों में अधिकांशतः श्रृंगार तथा वीर रस ही प्रधान रस होते हैं। इसी परम्परा का अनुसरण करते हुए महाकवि भास ने स्वप्नवासवदत्तम् में श्रृंगार तथा करूण रस को प्रधान रस और प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् में वीर रस को प्रधान रस के रूप में प्रयुक्त किया है। इनके अतिरिक्त दोनों रूपकों में स्थान–स्थान पर हास्य, रौद्र, करूण, अद्‌भुत आदि रसों की सफल अभिव्यजंना हुयी है।

3. स्वप्नवासवदत्तम् और प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् रूपकों का नामकरण पूर्णरूपेण सार्थक हैं। स्वप्नवासवदत्तम् के पाँचवें अंक में वत्सराज उदयन के वासवदत्ता को स्वप्न में देखने की कथा है। इसलिए नाटक का नाम स्वप्नवासवदत्तम् सार्थक है। प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् के प्रथम अंक में यौगन्धरायण अपने स्वामी उदयन को मुक्त कराने की प्रतिज्ञा करता है। तृतीय अंक में वासवदत्ता और उदयन के विवाह की प्रतिज्ञा भी करता है। नायक यौगन्धरायण की प्रतिज्ञाएँ पूर्ण होने एवं प्रतिज्ञा की प्रधानता होने के कारण इसका नामकरण सर्वथा समाचीन है।

4. भास की नाट्यकला की सफलता में पात्रों के उत्तम चरित्र–चित्रण की अहम् भूमिका है। संवाद पात्रों के अनुरूप है, संवाद प्रायः लघु विस्तार वाले हैं। कहीं–कहीं पर पात्र छोटे–छोटे सरल और रोचक संवाद भी बोलते हैं। पात्र स्वाभाविक तथा मौलिक संवाद बोलते हैं। अतः स्वप्नवासवदत्तम् और प्रतिज्ञायौगन्धरायण की पात्र–योजना और संवाद योजना सफल रही है।

5. "स्वप्नवासवदत्तम" मे स्वप्नवाला दृश्य का विशेष महत्त्व है। प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् में यौगन्धरायण की चिन्ता तथा प्रतिशोध की प्रतिज्ञा का विशेष महत्त्व है। इन रूपकों को देखकर दर्शक भास के महान् व्यक्तित्व से अभिभूत हुए बिना नहीं रह सकते हैं।

6. दोनों रूपकों में यत्र–तत्र प्रकृति वर्णन, वस्तु वर्णन, विविध वर्णन, आन्तरिक मनोभावों का वर्णन, जीव–जन्तुओं का वर्णन, व्यक्ति वर्णन, आध्यात्मिक वर्णन

की सुन्दर छटा विद्यमान है। स्वाभाविक एवं सुन्दर वर्णन होने के कारण यह दृश्य आँखों के सामने उपस्थित हो जाते हैं। ये सभी वर्णन रूपक की श्रीवृद्धि करते हैं।

7. रूपकों में नाना प्रकार के छन्दों की योजना भी दर्शनीय है। रूपकों में उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक तथा स्वभावोक्ति अलंकारों के सुन्दर उदाहरण का विशिष्ट स्थान है। इन अलंकारों में यथार्थता, विविधता, पूर्णत्व, औचित्यादि गुण विद्यमान हैं।
8. रूपकों के अध्ययन के पश्चात् यह कह सकते हैं कि रूपक की अभिनय कला सफल रही है। रूपकों का अभिनय सरलता से किया जा सकता है। कुछ घटनाओं का अभिनय कठिन एवं जटिल हो सकता है। लेकिन कथानक, पात्र, भाषाशैली, संवाद आदि सभी तत्व अभिनेयता के अनुकूल हैं।
9. स्वप्नवासवदत्तम् का नायक उदयन है। वह कला प्रेमी, धीरललित, रूपवान्, मृगया प्रेमी, कर्त्तव्यनिष्ठ और वीर योद्धा है। प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् का नायक मंत्री यौगन्धरायण है। वह वीर, कुशल राजनीतिज्ञ, बुद्धिमान्, स्वामिभक्त तथा कर्त्तव्य पालन में तत्पर है। महाकवि ने दोनों नायकों का कुशलता से व्यवहारिक चित्रण किया है।
10. रूपकों में नाट्य परम्परा के अनुसार राजा आदि उच्चकोटि के पात्रों की भाषा संस्कृत तथा प्राकृत है। जबकि स्त्री तथा अधम श्रेणी के पात्रों की भाषा अपभ्रंश है।
11. कवि ने प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् में प्रवेशक तथा विदूषक के माध्यम से प्रकरण की गति प्रदान करने वाली घटनाओं की सूचना दी है। जिससे प्रकरण की नीरसता एवं समाप्त हो जाती है।
12. सरल पद विन्यास से भाव दर्शकों के हृदय में स्वतः उत्पन्न हो जाते हैं। मानव हृदय की सूक्ष्म–अतिसूक्ष्म भावनाओं का चित्रण रूपकों में स्थान–स्थान पर देखा जा सकता है। कुछ मानवीय घटनाएँ है, और कुछ असाधारण घटनाएँ है।
13. प्रकरण में उदयन को रंगमंच पर न दिखाकर उसे कथानक में पिरोया गया है। पात्र समाज के विभिन्न वर्गों या पहलूओं का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। इसके माध्यम से कवि ने उदयन तथा अन्य पात्रों के चारित्रिक गुणों का अद्‌भुत प्रतिपादन किया है।

14. संस्कृत नाटकों की परम्परा के अनुसार दोनों रूपकों की समाप्ति आर्शीवादात्मक भरतवाक्य के साथ होती है। महाकवि ने स्वप्नवासवदत्तम् में '' **इमां सागर पर्यन्तां..... ..... प्रशास्तु नः''।।**[5] कहा है तथा प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् में **''भवन्त्वरजसो..... ..... प्रशास्तु नः।''**[6] कहकर रूपकों की समाप्ति की है।

उपरोक्त चौदह बिन्दु स्वप्नवासवदत्तम् और प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् के सभी अंको के आधार पर लिखे गए है।[7]

उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर स्पष्ट होता है कि रूपकों की कथावस्तु योजना, चरित्र–चित्रण, भाषा–शैली, संवाद योजना और नाट्य कला की दृष्टि संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान है। दोनों रूपकों के गुण–दोषों का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि दोनों ही उत्कृष्ट रचनाएँ हैं। यह मात्र आदर्शों की भावना पर आधारित न होकर पूर्णतः यर्थाथवादी रूपक है। पात्रों की कोटि के अनुरूप ही संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश भाषा का चुस्त एवं सहज प्रयोग किया गया है। इन रूपकों में कवि ने नाना विचारों का सजीव वर्णन करके हृदय आह्लादित कर दिया है।

इन सभी विशेषताओं के विवेचन से स्पष्ट होता है कि **महाकवि भास प्रणीत "स्वप्नवासवदत्तम् और प्रतिज्ञायौगन्धरायणम् "का संस्कृत नाट्य सांहित्य और संस्कृत साहित्य में "विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान "** है। ये दोनों उत्कृष्ट कोटि के रूपक हैं।

रत्नावली एवं प्रियदर्शिका का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य में अनेक नाटक–नाटिकाओं की रचना हुयी है। संस्कृत साहित्य में कोई भी रचना अपनी विशिष्टता के कारण ही उच्च या विशिष्ट स्थान पाती है। महाकवि हर्ष विरचित रत्नावली एवं प्रियदर्शिका का संस्कृत नाट्य साहित्य में विशिष्ट स्थान है। रत्नावली और प्रियदर्शिका की कथावस्तु के संयोजन में कवि की मौलिकता का पूर्ण योगदान है। प्रस्तुत नाटिकाओं की उपयोगिता को निरूपित करने वाली विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. रत्नावली एवं प्रियदर्शिका नाटिका की कथावस्तु के प्रारम्भ में कवि ने अन्य संस्कृत कवियों की भाँति ही नाट्य परम्परा के अनुरूप अपनी कृति के विध्नों के

विनाश के लिए एवं निर्विध्न समाप्ति के लिए आर्शीवादात्मक मंगलाचरण का विधान किया है–

पादाग्रस्थितया मुहुः स्तनभरेणानीतया नम्रतां
शम्भोः सस्पृह लोचनत्रयपथं यान्त्या तदाराधने
हीमत्या शिरसीहितः सपुलकस्वेदोदगमोत्कम्पया
विश्लिष्यन्कुसुमाञ्जलिर्गिरिजया क्षिप्तोऽन्तरे पातु वः।।[8]

धूमव्याकुल दृष्टिरिन्दु किरणैराह्लादिताक्षी पुनः
पश्यन्ती वरमुत्सुकानतमुखी भूयो हिय ब्रह्मणः।
सेर्ष्या पादनखेन्दु दप्रणगते गङ्गां दधाने हरे
स्पर्शादुत्पुलकाकरग्रहविधौ गौरी शिवायस्तु वः।।[9]

इन श्लोकों में क्रमशः भगवान् शिव और माता पार्वती से रक्षा करने की कामना की है।

2. नाटिकाओं में रस का महत्त्वपूर्ण स्थान है। कवि ने रत्नावली एवं प्रियदर्शिका नाटिका में श्रृंगार रस को प्रधान रस के रूप में तथा हास्य, वीर, करूण, रौद्र आदि अन्य रसों को अंगरूप में प्रयुक्त किया है। महाकवि ने अंगी रस श्रृंगार के दोनों रूपों सम्भोग तथा विप्रलम्भ श्रृंगार का सुन्दर चित्रण किया है। इसके अतिरिक्त नाटिकाओं में स्थान–स्थान पर वीर, करूण, हास्य, रौद्र आदि रसों का उल्लेख किया गया है।

3. नाटिकाओं में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, स्वभावोक्ति, एवं दृष्टान्त आदि अलंकारों का सुन्दर परिपाक किया है। जिसके कारण नाटिकाओं का भव्य एवं चित्रात्मक हो गया है। कवि ने अलंकारों में यथार्थतः रम्यता विविधता, पूर्णत्व, औचित्य आदि गुणों का समावेश किया है।

4. संस्कृत नाट्य परम्परा के अनुरूप ही कवि ने नाटिकाओं में प्रस्तावना की योजना की गयी है।

5. प्रस्तुत नाटिका में निषिद्ध एवं नीरस, किन्तु नाटिका को गति प्रदान करने वाली घटनाओं की सूचना देने के लिए विदूषक, विष्कम्भकम् एवं कंचुकीय का प्रयोग किया गया है।
6. नाटिकाओं में पात्रो का कथोपकथन सर्वथा स्वभाविक है।
7. प्रस्तुत नाटिकाओं में सर्वथा अभिनेय की रूचिता है। इनके संवाद छोटे, सरल, एवं रोचक होते हैं। जो पात्रों के अभिनय के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं।
8. नाटिकाओं में यत्र–तत्र प्रकृति वर्णन, वस्तु वर्णन, विविध वर्णण, सन्ध्यावर्णन, आन्तरिक मनोभावों का वर्णन आदि की छटा विद्यमान है। से सभी नाटिकाओं में अपूर्ण श्रीवृद्धि करते हैं।
9. नाटिकाओं की नायिकाओं के नाम पर ही दोनों नाटिकाओं का नामकरण हुआ है।
10. नाटिकाओं का नायक राजा उदयन है। कवि ने राजा उदयन के अनेक चारित्रिक गुणों का कुशलतापूर्वक उल्लेख किया है।
11. भारतीय संस्कृति एवं हिन्दू धर्म के अनुसार ब्राह्मण को यज्ञोपवीत धारण करने का विधान बताया गया है।
12. नाटिकाओं में नाट्य परम्परा के अनुरूप उच्चकोटि, स्त्री पात्र एवं अधम कोटि के पात्रों द्वारा संस्कृत, प्राकृत और शौरसेनी भाषा का प्रयोग किया है।
13. नाटिकाओं की स्त्रियों या स्त्री पात्रों के हाव–भाव एवं सौन्दर्य का स्वभाविक तथा मनोरम एवं रोचक वर्णन किया है।
14. दोनों नाटिकाओं में महाकवि की विविध शास्त्रज्ञता, कल्पनाशक्ति और सूक्ष्म–भावों का अभिव्यंजन दृष्टव्य होता है।
15. नाटिकाओं मे सूक्तियों या सुभाषितों की भी सुन्दर प्रसंगानुकूल योजना की गयी है।
16. दोनों नाटिकाओं में युद्ध वर्णन भी बड़े रोमांचकारी ढ़ंग से वर्णित है।
17. नाटिकाओं की प्रत्येक घटना सार्थक एवं रोचक है। प्रत्येक घटना किसी विशेष उद्देश्य से प्रेरित होकर घटित होती है।

18. प्रियदर्शिका नाटिका में राजा उदयन की वैद्यत्व कुशलता का परिचय दृष्टिगोचर होता है।

19. संस्कृत नाट्य परम्परा के अनुसार रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिकाओं की समाप्ति भरत वाक्य से होती है। महाकवि ने रत्नावली में **''उर्वीमुद्दामसस्यां ....दुर्जया वज्रलेपाः।''**[10] तथा प्रियदर्शिका में **उर्वीमुद्दामसस्यां ... .दुःसहावज्रलेपाः।।''**[11] कहकर राजा उदयन से सम्पूर्ण पृथ्वी के कल्याण की कामना की है।

उपरोक्त सभी बिन्दु रत्नावली और प्रियदर्शिका के सभी अंको के आधार पर है।[12]

रत्नावली और प्रियदर्शिका का कथानक नाटकीय विशेषताओं से युक्त है। नाटिकाएँ भाव, माधुर्य एवं प्रसाद गुण से युक्त है। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि महाकवि हर्ष प्रणीत रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिका पाठकों एवं श्रोतागणों के सम्मुख मनोरंजन एवं रसानुभूति, कराने वाली कथावस्तु प्रदान करती है। संस्कृत नाट्य साहित्य में नाटिका कहते ही रत्नावली और प्रियदर्शिका का नाम मुँह में आ जाता है। संस्कृत नाट्य साहित्य में दोनों ही नाटिकाएँ अत्यधिक प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय हैं। ये दोनों नाटिकाएं सर्वांगपूर्ण होने के कारण संस्कृत साहित्य में विशिष्ट स्थान रखती है। **रत्नावली और प्रियदर्शिका का संस्कृत साहित्य में "विशिष्ट स्थान "है**

तापसवत्सराज का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य में किसी नाटक की सफलता उसके संवाद कौशल, भाषा शैली, रस, छन्द, अलंकार और पात्र योजना पर निर्भर करती है। महाकवि अनंगहर्ष प्रणीत तापसवत्सराजचरितम् का संस्कृत नाट्य साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान है। प्रस्तुत रूपक की उपयोगिताओं को निरूपित करने वाली विशेषताओं का उल्लेख इस प्रकार है–

1. तापसवत्सराजचरितम् नाटक की कथावस्तु के आरम्भ में कवि अनंगहर्ष ने अपनी कृति के निर्विध्न समाप्ति एवं विध्नों के विनाश के लिए मंगलाचरण का विधान किया है–

पाण्डुचन्दनसेन मुखं किमर्थ ।
मत्प्रार्थितार्थ विमुखी सुमुखि स्थितासि।।[13]

उक्त श्लोक में सुन्दर मुखवाले ईश्वर से कार्य की बाधा समाप्त करने को कहा है।

2. संस्कृत नाट्य साहित्य में रसों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। तापसवत्सराज श्रृंगार रस प्रधान रूपक है। इस रूपक में श्रृंगार रस के दोनों रूप संयोग श्रृंगार एवं विप्रलम्भ श्रृंगार है। इसमें करुण विप्रलम्भ की प्रधानता है। इस रूपक में करुण विप्रलम्भ रस प्रधान रस है। कहीं–कहीं पर हास्य, वीर और रौद्र आदि रसों की भी योजना की गयी है।

3. तापसवत्सराजचरितम् रूपक का नामकरण पूर्णरूपेण सार्थक है। तापसवत्सराजचरितम् के द्वितीय अंक में राजा उदयन का तपस्वी या सन्यासी का वेश धारण करना और राजा के तापस वेशधारी चित्रफलक को देखकर राजकुमारी का भी तपस्विनी या संन्यासिनी वेश धारण करना। इसलिए इस नाटक का नाम तापसवत्सराजचरितम् सार्थक है।

4. महाकवि अनंगहर्ष की नाट्यकला की सफलता में पात्रों के उत्तम चरित्र–चित्रण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। नाटक में उत्तम, मध्यम और अधम श्रेणी के पात्र हैं। जो नाटक की कथावस्तु को गति प्रदान करते हुए रोचक बनाते हैं।

5. रूपक में यत्र–तत्र प्रकृति वर्णन, वस्तु वर्णन, विविध वर्णन, पशु–पक्षी वर्णन, आध्यात्मिक वर्णन की सुन्दर छटा विद्यमान है। प्रत्येक वर्णन सुन्दर एवं स्वभाविक होने के कारण आंखों के सामने उपस्थित हो जाता है। ये सभी वर्णन रूपक की श्रीवृद्धि करते हैं।

6. रूपक में नाना प्रकार के छन्दों की योजना भी दर्शनीय हैं। रूपक में उपमा, श्लेष, यमक, उत्प्रेक्षा, रूपक तथा स्वभावोक्ति आदि अलंकारों का सुन्दर परिपाक

किया है। इन अलंकारों में यथार्थता, विविधता, पूर्णत्व एवं औचित्यादि गुण विद्यमान हैं।

7. नाटक में सर्वथा अभिनेयता एवं बिम्ब विधान भास की विशेषता है। रूपक के संवाद सरल, छोटे, प्रसंगानुकूल एवं रोचक तथा रस चरित्र है। जो नाट्यशास्त्रीय दृष्टि से सफल नाटक है।
8. तापसवत्सराजचरितम् रूपक का नायक उदयन है। कवि ने तपस्वी उदयन के अनेक चारित्रिक गुणों का कुशलता पूर्वक उल्लेख किया है।
9. रूपक में नाट्य परम्परा के अनुसार उच्चकोटि के पात्रों की भाषा संस्कृत तथा प्राकृत है। जबकि स्त्री और अधम श्रेणी के पात्रों की भाषा शौरसेनी एवं अपभ्रंश है।

10. कवि ने रूपक में प्रवेशक तथा विदूषक के माध्यम से प्रकरण की गति प्रदान करने वाली घटनाओं की सूचना दी है।
11. नाटक में सूक्तियों या सुभाषितों की भी प्रसंगानुकूल योजना की गयी है।
12. रूपक की प्रत्येक घटना किसी विशेष उद्देश्य के कारण घटित होती है। रूपक में घटित सभी घटनाएं पूर्णतः सार्थक एवं रोचक हैं।
13. रूपक में युद्ध वर्णन बड़े रोमांचकारी ढ़ग से वर्णित है।
14. रूपक में भारतीय संस्कृति के अनुसार हिन्दू धर्म में पूजा–पाठ एवं अतिथि सत्कार का विधान किया गया है।
15. कवि ने मंत्री यौगन्धरायण के माध्यम से देश– प्रेम, त्याग, कर्त्तव्यपरायण की भावना की शिक्षा दी है।
16. संस्कृत नाट्य परम्परा के अनुसार रूपक की समाप्ति में भरतवाक्य का विधान किया है। महाकवि अनंगहर्ष ने तापसवत्सराजचरितम् में भरतवाक्य कहा ''**आम्नायार्थ .... प्रजेऽकंकटके**''।[14] इसमें देशोन्नति तथा धार्मिक भावों से ओत–प्रोत, राष्ट्रीय कल्याण की कामना की है।

उपरोक्त सभी बिन्दु तापसवत्सराजचरितम् के सभी अंको पर आधारित है।[15]

उपर्युक्त विशेषता के आधार पर कहा जा सकता है कि यह रूपक एक ओर तो अपनी सुन्दर मधुर एवं लालित्यपूर्ण भाषा की दृष्टि से कालिदास के रूपकों की श्रेणी में रखा जा सकता है। वहीं दूसरी ओर अपनी सुन्दर रसाभिव्यक्ति से यह भवभूति के काव्यों के समक्ष जाता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि महाकवि अनंगहर्ष प्रणीत ''तापसवत्सराजचरितम्'' सहृदय सामाजिकों के सम्मुख रसानुभूति, आनन्दानुभूति एवं मनोरंजन का साधन है। इस रूपक का कथानक नाटकीय विशेषताओं से युक्त है। यह देश–प्रेम, त्याग, कर्त्तव्य भावना और राष्ट्रीय भावना से परिपूर्ण संस्कृत साहित्य का 'अमूल्य रूपक ' है। रूपक में विषय तथा रस की मौलिक, भाषा शैली, चरित्र–चित्रण, संवाद कौशल, कथावस्तु और नाट्य कला की दृष्टि से संस्कृत साहित्य में महत्त्वपूर्ण एवं अमूल्य स्थान है। **तापसवत्सराज का संस्कृत साहित्य एवं संस्कृत नाट्य साहित्य में ''अमूल्य, विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण'' स्थान है।**

(ख) वत्सराज उदयन पर आधारित प्रमुख संस्कृत रूपकों के रूपककारों का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य में अनेक प्रसिद्ध रूपककार हुए हैं। जिनका नाम अत्यन्त आदर एवं सम्मान से लिया जाता है। उनमें महाकवि कालिदास, भास, शूद्रक, हर्षदेव, अश्वघोष, विशाखदत्त और अनंगहर्ष आदि सुप्रसिद्ध रूपककार एवं नाटककार है।। किसी भी कवि का संस्कृत साहित्य में उच्च स्थान उसकी कृतियों की विशेषता के आधार पर होता है। प्रतिभाशाली कवि अपनी एक ही कृति से संस्कृत साहित्य में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त कर प्रसिद्ध होने का गौरव प्राप्त करता है। महाकवि भास, हर्षदेव और अनंगहर्ष भी संस्कृत साहित्य के प्रसिद्ध रूपककार हैं।

१. रूपककार महाकवि भास का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य की महाकवि भास अमर विभूतियों में से एक हैं। संस्कृत रूपककारों में भास का उत्कृष्ट स्थान है। महाकवि कालिदास, भवभूति, बाणभट्ट, जयदेव, राजशेखर आदि महान् एवं विख्यात कवियों ने भी भास की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करके संस्कृत साहित्य में उनकी महत्ता एवं सम्मान को प्रकट किया है।

मालविकाग्निमित्रम् में कालिदास ने कहा है – **प्रथितयशसां भाससौमिल्ल कविपुत्रादीनां प्रबन्धानतिक्रम्य कथं वर्तमानस्य कवेः कालिदास्य कृतौ बहुमानः।''**[16] इस वाक्य से स्पष्ट होता है कि कविवर कालिदास के समय तक भास की रचनाएँ लोक प्रसिद्ध हो चुकी थी। इसलिए महाकवि कालिदास अपनी रचनाओं को उनकी रचनाओं के सम्मुख तुच्छ मानते हैं। महाकवि भास संस्कृत साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान एवं महत्त्व रखते हैं।

नाट्य को पंचम वेद की संज्ञा दी गयी है। इस दृष्टिकोण से नाटक या नाट्य को संस्कृत साहित्य की विधाओं में विशेष सम्मान प्राप्त है। इसके अतिरिक्त कालिदास ने **''नाटयं भिन्नवेर्जनस्य बहुव्याप्येकं समराधनम्''**[17] कहा है । नाटककार भास की रचनाओं में उपर्युक्त बातों की पुष्टि हो जाती है।

रूपककार भास संस्कृत लौकिक साहित्य के दैदीप्यमान नक्षत्र हैं। रूपककार भास ने भिन्न–भिन्न कथा स्रोतो को आधार बनाकर त्रयोदश या तेरह उच्चकोटि के रूपकों की रचना करके संस्कृत नाट्य साहित्य के भण्डार में अमूल्य रूपकों को प्रदान किया है।[18]

रूपककार भास संस्कृत नाट्य साहित्य के एक ऐसे नाटककार हैं, जिन्होंने अनेक क्षेत्रों को आधार बनाकर इतने अधिक संख्या में रूपकों की रचना की है। रूपककार ने सर्वाधिक रूपकों की रचना करके संस्कृत साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है।

संस्कृत साहित्य में सर्वप्रथम एकांकी रूपकों का प्रार्दुभाव करने का सम्पूर्ण श्रेय नाटककार भास को प्राप्त होता है। रूपककार भास के रूपकों में अभिनेयता का गुण सफल रूप में विद्यमान है। रूपककार भास ने पात्रों द्वारा सफलतापूर्वक अभिनय किये जाने वाले रूपकों की रचना की है। यह रूपक दृश्यकाव्य की सर्वथा उपयुक्त संज्ञा है।[19]

नाटककार भास ने रामायण, महाभारत, पुराण, उदयन–प्रेम कथा और उदयन लोक–कथाओं के आधार पर रूपकों की रचना करके अपनी प्रतिभा सम्पन्नता,

कल्पनाशक्ति एवं नाट्यकला का कुशल एवं सुन्दर परिचय दिया है। उनकी नाट्यकला ही साहित्याकाश में उनकी सफलता एवं प्रतिष्ठा निश्चित करती है।[20]

नाटककार भास ने रूपकों की रचना वैदर्भी रीति में की है। रूपकों की भाषा प्रांजन एवं समास रहित है। अलंकारों का रूपक में स्थान–स्थान पर दर्शन होता है। सभी नाटकीय पात्रों के चरित्र निर्मल और नीतिपरक हैं। रूपकों में अश्लीलता दोष भी नहीं है। इससे भास का संस्कृत साहित्य में स्वतः ही स्थान प्रकट होता है।[21]

उपर्युक्त विशेषता के आधार पर संस्कृत साहित्य में महाकवि भास की प्रमुख देन इस प्रकार है–

i. नाटककार भास ने संख्या के आधार पर सर्वाधिक **" तेरह १३ रूपकों "** की रचना की।

ii. संस्कृत साहित्य को स्वयं सर्वप्रथम एकांकी प्रदान करना।

iii. पात्रों के अभिनय की दृष्टि से पूर्णरूपेण सफल नाटकों की रचना करना।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर रूपककार भास को कालिदास, भवभूति, बाणभट्ट आदि कवियों से श्रेष्ठ मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। नाटककार भास संस्कृत नाटकों की विकास परम्परा के दैदीप्यमान मणि है। जिस मणि का प्रकाश सुदूर दक्षिण से लेकर उत्तर तक तथा पूरब से लेकर पश्चिम तक चमकता रहता है।

इस प्रकार **"महाकवि भास " का संस्कृत साहित्य एवं साहित्यकारों में ''अप्रतिम स्थान एवं विशिष्ट स्थान '' प्राप्त है। संस्कृत साहित्य में "महाकवि भास प्रथम श्रेणी "के रूपककारों एवं कवियों में "विशिष्ट स्थान" रखते हैं।**[22]

२. रूपककार महाकवि हर्ष का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य में महाकवि हर्ष की नाटिकाओं का 'महत्त्वपूर्ण स्थान' है। महाकवि हर्ष रत्नावली एवं प्रियदर्शिका जैसी सफल नाटिकाओं के रचनाकार हैं।

इसलिए संस्कृत साहित्य में उत्कृष्ट योगदान करने का उन्हें गौरव प्राप्त है। जबकि अनेकानेक नीरस एवं प्रभावहीन रचना करने वाले कवि किसी भी साहित्य में नगण्य हो जाते हैं। महाकवि बाणभट्ट, जयदेव, एवं सोड्ढ़ल आदि कवियों ने महाकवि हर्ष की प्रशंसा मुक्त कण्ठ से की है।

महाकवि हर्ष विद्वान् एवं उच्चकोटि के कवि थे। उस समय वह उदार विद्या प्रेमी के रूप में प्रसिद्ध हुए। अपने जीवन काल एवं उत्तरवर्ती कुछ शताब्दियों तक आलोचकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कराने में सफल रहे। महाकवि हर्ष के राजकवि पण्डित बाणभट्ट ने हर्ष की काव्य–चातुरी की भूरि–भूरि प्रशंसा हर्षचरित में दो बार की है। कविवर बाणभट्ट ने हर्ष के कवित्व और त्याग की प्रशंसा इस प्रकार की है– **"अपि चास्य प्रज्ञायाः शास्त्राणि कवित्सवस्प वांच ..... न पर्याप्तो विषयः।"** [23] अर्थात् जैसे– इनके प्रताप को प्रकट करने के लिए विषय का आभाव है। वैसे ही इनकी काव्य प्रतिभा को प्रकट करने में शब्द पर्याप्त नहीं हैं। महाकवि बाणभट्ट ने एक अन्य स्थल पर कवि को काव्य प्रतिभा और कथाओं में अनास्वादित अमृत को बहाने वाला कहा है – **"राजसम्भाषणे परित्यक्तमपि मधुवर्षन्तम् 'काव्यकथास्वपीतामृतद्ध–मुमन्तम्' विमलकपोल–प्रतिबिम्बतां चामर ग्राहिणी विग्रहिणीमिवं मुखवासनी सरस्वतीमाद्धानम्।"** [24]

कविवर जयदेव ने कवि हर्ष को कविता कामिनी कहते हुए महाकवि भास और कालिदास के साथ स्मरण किया है–

यस्याश्चौरश्चिकुर निकरः कर्णपूरो मयूरो
भासो हासः कविकुलगुरूः कालिदासो विलासः
हर्षो हर्षो ह्रदयवसतिः पञ्चवाणस्तु बाणः
कैषां नैषा कथय कविता कामिनी कौतुकाय।।[25]

सोड्ढल ने हर्ष को श्रीहर्ष की उपाधि प्रदान की है –

श्रीहर्ष इत्यवनिवर्तिषु पार्थिवेषु नाम्नैव केवलमजायत वस्तुतस्तु।
श्रीहर्ष एष निजसंसदि येन राज्ञा सम्पूजितः कनककोटिशतेन बाण।।[26]

आचार्य दामोदर गुप्त ने कहा है –

आश्लिष्ट सन्धिबन्धं सत्पात्रसुवर्ण योजितं सुतराम्।
निपुण परीक्षक दृष्टं राजति रत्नावलीरत्नम् ।।[27]

रत्नावली और प्रियदर्शिका नाटिकाओं के रचयिता कविवर हर्ष का संस्कृत नाट्य साहित्य में विशिष्ट स्थान है। नाटिकाओं की भाषा शैली, काव्य प्रतिभा एवं शैली की दृष्टि से हर्ष प्रथम कोटि के कवि है। दोनों नाटिकाओं में भाषा और शैली की भावाभिव्यक्ति सरल, सुबोध एवं स्पष्टता का सुन्दर विन्यास किया है। नाटिकाओं की रचना मंचीय गत्यात्मकता को ध्यान में रखकर हुई है, साथ ही यह कृति शास्त्रीय सैद्धान्तिक दृष्टि से भी सफल है। नाटिकाओं को रोमांचक और मनोरंजनात्मक बनाने के लिए प्रसंगानुकूल घटनाओं को घटित करने की कला कवि में विद्यमान है। यह सभी कवि की महान सफलता है।

कविवर हर्ष ने रस, छन्द, अलंकार और गुणों का सुन्दरता से प्रयोग कर नाटिकाओं को और भी रोचक बनाने में सफलता प्राप्त की है। नाटिकाओं के प्रकृति वर्णन, वस्तु वर्णन और विविध वर्णनों ने कवि हर्ष की उत्कृष्ट काव्य प्रतिभा का उद्‌बोधक है। नाटिकाओं के गर्भांक की योजना में रत्नावली एवं प्रियदर्शिका की प्रणय कथाओं को कवि हर्ष ने परिणत किया है। कवि ने अपनी मनोहर नाटिकाओं द्वारा संस्कृत नाटककारों में अपना विशिष्ट स्थान बना दिया है।

डॉ० कपिलदेव द्विवेदी जी ने संस्कृत साहित्य के इतिहास में कहा है–

श्रृंगार रम्यां प्रियदर्शनो यश्चकार हर्षः प्रियदर्शिकाख्याम्
रत्नावलीं सागर रत्नहृद्यां विद्वन्मनोज्ञां विदधे हिताय।।
कारण्यपूर्ण गुणिवृन्दनन्दं नागाख्य नन्दं विममे मुरेंयः
रत्नत्रयं चारगुणत्रयेण प्रस्तोति मूलप्रकृतिं प्रजाभ्यः।।[28]

महाकवि हर्ष ने संस्कृत–नाट्य–साहित्य को नाटिकाओं की परम्परा प्रदान की है। जिसका अनुसरण एवं विकास हमें परवर्ती साहित्य में मिलता है। इस दृष्टि से हर्षवर्द्धन या हर्ष का स्थान संस्कृत नाट्य–साहित्य में बहुत ऊँचा है।

एक सफल रूपककार के रूप में महाकवि हर्ष की नाटिकाओं में समस्त नाट्य गुण परिलक्षित होते हैं। जिसके आधार पर कवि हर्ष को संस्कृत साहित्य में उच्च कोटि का कवि माना गया है।

निःसंदेह कवि हर्ष ने रत्नावली और प्रियदर्शिका की रचना करके संस्कृत साहित्य की अमूल्य निधि में श्रीवृद्धि की है। हर्षदेव का वास्तविक स्थान " द्वितीय श्रेणी के रूपककारों " में होना चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि **महाकवि हर्ष संस्कृत साहित्य के उत्कृष्ट कोटि के महान कवि हैं।**

३. रूपककार महाकवि अनंगहर्ष का संस्कृत साहित्य में स्थान :–

संस्कृत साहित्य में महाकवि अनंगहर्ष भी अन्य कवियों के समान प्रसिद्ध हैं। किसी भी कवि का संस्कृत साहित्य में स्थान उसकी कृतियों के द्वारा ही निर्धारित किया जा सकता है। प्रतिभाशाली कवि अपनी एक ही कृति के द्वारा साहित्य में उत्कृष्ट स्थान प्राप्त कर गौरवान्वित होता है। ठीक उसी प्रकार श्री अनंगहर्ष अपनी एक ही कृति **'तापसवत्सराजचरितम्'** की रचना कर संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध एवं लोकप्रिय हो गये। कुछ कवि अनेकों नीरस एवं प्रभावहीन रचना करके भी संस्कृत साहित्य में कोई स्थान प्राप्त नहीं कर सके।

आठवीं शताब्दी के प्रतिष्ठित कवियों एवं रूपककारों की गणना करते समय महाकवि श्री अनंगहर्ष का मान सर्वोपरि स्थान पर आता है। रूपककार श्री अनंगहर्ष विलक्षण प्रतिभा एवं उत्कृष्ट कल्पनाशीलता के आधार पर संस्कृत साहित्य के मूर्न्धन्य रूपककारों की श्रेणी में आते हैं। रूपककार का लालित्यपूर्ण कौशल, कान्तपदावली एवं काव्य सौष्ठव उन्हें कविकुल गुरू कालिदास के समक्ष पहुँचा देता है। वहीं रूपककार अपने नाटकीय कौशल, भावाभिव्यक्ति, पात्र–योजना एवं रस परिपाक की दृष्टि से भवभूति के समीप खड़े हो जाते हैं। नाटक में वर्णित राजनीति एवं राजनीतिक जीवन की झाँकी दर्शकों एवं पाठकों को विशाखदत्त के मुद्राराक्षस की याद दिलाता है। उदयन के सेनापति और आरूणि के बीच हुए युद्ध वर्णन की कठोरतम अभिव्यक्ति रूपककार को भट्टनाटय के समीप खड़ा कर देती है।[29]

रूपककार अनंगहर्ष अपने भाषा–कौशल, कोमल–भावनाओं, कल्पना सौन्दर्य एवं सुन्दर रस, छन्द, अलंकार योजना के माध्यम से संस्कृत नाट्य साहित्य में विशिष्ट स्थान प्राप्त करते हैं। वृहत्कथामंजरी के कथानक को आधार बनाकर

रूपककार ने " तापसवत्सराजचरितम् " नाटक की रचना की है। रूपककार अनंगहर्ष ने महाकवि कालिदास, भवभूति आदि श्रेष्ठ कवियों की परम्परा को आगे बढ़ाया है। नाटककार ने नारी विषयक विचारों को प्रमुखता से उद्घाटित किया है।[30]

रूपककार ने तत्कालीन एवं वर्तमान समाज में देश–प्रेम, त्याग, बलिदान एवं देशोन्नति की भावनाओं का विकास करने का सफल प्रयास किया है। राष्ट्र पर विपत्ति आने पर यौगन्धरायण जैसे वीर सपूत अपने प्राणों की बाजी लगा देते हैं। उसी प्रकार सभी नागरिकों को अपने प्राण राष्ट्र की रक्षा के लिए समप्रित कर देने चाहिए।

नाटककार ने शब्दालंकारों और अर्थालंकारों का समुचित प्रयोग करके अपनी नाट्य कला का परिचय दिया है। रूपक में शुद्ध एवं परिष्कृत भाषा शैली, प्रसाद, ओज आदि गुण वैदर्भी रीति का सुन्दर एवं नाट्यनुकूल प्रयोग किया है। सूक्तियों का प्रयोग नाटक को और भी रोचक बना देता है। नाटककार ने अनेक स्थानों पर पात्रो की वाक्–पटुता एवं वक्रोक्ति से नाटक को मनोरंजनात्मक बना दिया है।[31]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि रूपककार श्री अनंगहर्ष ने उत्कृष्ट नाट्य शैली, नाट्य कौशल, सुन्दर रस–परिपाक एवं उदात्त कल्पना का प्रयोग करके नाटक को रोचक एवं मनोरंजक बनाने में अतुल्यनीय सफलता प्राप्त की है। रूपककार अनंगहर्ष कालिदास, भास एवं भवभूति आदि महाकवियों के पश्चात् दूसरे श्रेणी के नाटककारों में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। संस्कृत नाट्य साहित्य में **महाकवि श्री अनंगहर्ष द्वितीय श्रेणी के कवियों** में गिने जाते हैं। तापसवत्सराजचरितम् नामक कृति संस्कृत नाट्य साहित्य को उनकी अमूल्य देन का उदाहरण है। यद्यपि आज अनंगहर्ष संस्कृत साहित्य जगत के अधिकांश कवियों महाकवियों की भाँति अत्यधिक लोकप्रिय एवं प्रसिद्ध नहीं हैं। तथा इससे उनका संस्कृत साहित्य में महत्त्व कम नहीं होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि महाकवि **श्री अनंगहर्ष आठवीं शताब्दी के प्रमुख एवं प्रसिद्ध रूपककारों** में से एक हैं। संस्कृत साहित्य में वह **"द्वितीय श्रेणी के नाटककारों एवं कवियों में विशिष्ट स्थान " रखते हैं।**[32]

वत्सराज उदयन पर आधारित प्रमुख संस्कृत रूपकों के **रूपककारों का संस्कृत साहित्य में विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान** है। इसमें महाकवि नाटककार **भास संस्कृत साहित्य में प्रथम श्रेणी के कवियों** में से एक हैं। जबकि रूपककार **श्री हर्षदेव एवं श्री अनंगहर्ष संस्कृत साहित्य जगत के दूसरे या द्वितीय श्रेणी** के कवियों में अपना **विशिष्ट स्थान** रखते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है वत्सराज उदयन पर आधारित रूपकों के रचयिताओं का पाठकों, दर्शकों एवं समस्त भारतवासियों को सन्देश है कि – राजा उदयन जैसा प्रजाप्रिय, परोपकारी, दयावान्, आदर्श पति, ईमानदार, वीर योद्धा होना चाहिए। वासवदत्ता जैसी आदर्श पत्नी, देशभक्त रानी, पतिव्रता, कर्त्तव्यपरायण, राज्य का कल्याण चाहने वाली स्त्री होनी चाहिए। जो समाज को अपने आदर्श चरित्र एवं जीवन शैली पर चलने की प्रेरणा देते हैं। यौगन्धरायण, विदूषक, पद्मावती, विजयसेन, रूमण्वान्, लामकायन आदि सभी पात्रों के चरित्र की कुछ ना कुछ विशेषताएँ ऐसी हैं। जैसे – स्वामिभक्त, कूटनीतिज्ञ, हँसमुख प्रवृत्ति, नीतिनिपुणता, आज्ञाकारी सेनापति, आदर्श प्रेमिका, देशभक्त, परोपकार की भावना, कर्त्तव्यनिष्ठता आदि ऐसे गुण हैं। जो मानव के चरित्र को परिपक्वता प्रदान करते हैं। यह चारित्रिक गुण हमें प्रेरणा देते हैं कि इन गुणों का समावेश अपने चरित्र में करके एक सफल व्यक्तित्व का निर्माण कर सकते हैं।

रूपकों में मनोरंजन के अनेक साधन वर्णित है। जैसे नाटक करना या खेलना, ऐन्द्रजालिक का जादू दिखाना, मदन महोत्सव और कौमुदी उत्सव का मनाना, चित्र कला, चित्र बनाना, वीणा बजाना, संगीत सुनना, संगीतज्ञ का मधुर गीत सुनाना, राज्य सभा में नृत्यांग्नाओं का नृत्य करना, मदारी का खेल दिखाना, उपवन में वार्त्तालाप करना, विदूषक की हसाऊ वेशभूषा पहनना और अटपटी या बेमेल बातें करना आदि सभी मनोरंजन के साधन हैं। वर्तमान समय में भी हम मनोरंजन के इन साधनों का प्रयोग करते हैं। वत्सराज उदयन पर आधारित रूपक यह बोध कराते है कि हमें मनोरंजन के लिए सभी विधाओं का ज्ञान होना चाहिए।

स्वप्नवासवदत्तम्, प्रतिज्ञायौगन्धरायणम्, रत्नावली, प्रियदर्शिका और तापसवत्सराज में वर्णित राजनीति, कूटनीति, नीतिगत ज्ञान, नीति–निपुणता,

कर्त्तव्यपरायणता, राजनीतिक योजना, गुप्तचर व्यवस्था आज भी एक सफल राजव्यवस्था के संचालन के लिए आवश्यक है और एक सफल प्रशासक को उपरोक्त सभी बातों का ध्यान प्रशासनिक व्यवस्था में रखना चाहिए।

इन रूपकों में अनेक शिक्षाएँ हैं, जो हमें समाज, राजनीति, धर्म, परम्पराओं, विचारधाराओं, रीति–रिवाजों, मनोरंजन के साधनों, संगीत, कला, चित्रकला, चिकित्सा, व्यवसाय आदि का बोध कराती हैं। और हमें प्रेरित करती है कि हम वत्सराज उदयन पर आधारित रूपकों का अत्यधिक प्रचार–प्रसार करे।

उदयन का पद्मावती, रत्नावली और प्रियदर्शिका से द्वितीय विवाह करना राज्य विस्तार करने का अच्छा उपाय है। यद्यपि उदयन द्वितीय विवाह करने से चक्रवर्ती सम्राट बन जाता है। फिर भी वह अपनी प्रथम पत्नी वासवदत्ता को नहीं भूलता है।

अतः हम कह सकते हैं कि वत्सराज उदयन पर आधारित रूपकों का अध्ययन समाज के प्रत्येक वर्ग चाहे वह अमीर हो या गरीब हो, तथा सभी धर्मों, जातियों, सम्प्रदायों, पंथों, क्षेत्रों के लोगों के लिए अत्यन्त आवश्यक एवं उपयोगी है। जहाँ एक ओर ये रूपक कूटनीति, राजनीति, नीतिपरक ज्ञान देते हैं। वहीं दूसरी ओर धर्म, संस्कृति, रीति–रिवाज, चिकित्सा, मनोरंजन के साधनों का बोध कराते हैं। साथ ही साथ हमें शिक्षा देते हैं कि हम अन्य लोगों को इन रूपकों को पढ़ने के लिए प्रेरित करें!

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. स्वप्नवासवदत्तम्,रेग्मीः आचार्य श्री शेषराजशर्मा, प्रथमः अंक पृ०सं०– १
2. स्वप्नवासवदत्तम्,रेग्मीः आचार्य श्री शेषराजशर्मा, प्रथमः अंक पद्य सं०– १
3. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रायःडॉ० गंगासागर, प्रथमः अंक पद्य सं०– १
4. साहित्यदर्पणः, आचार्य भरत मुनि,
5. स्वप्नवासवदत्तम्,रेग्मीः आचार्य श्री शेषराजशर्मा, षष्ठः अंक, भरतवाक्य
6. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रायःडॉ० गंगासागर, चतुर्थः अंक, भरतवाक्य
7. स्वप्नवासवदत्तम्,रेग्मीःजी, प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रायःजी के सभी अंक
8. रत्नावली, भट्टाचार्य व्रजरत्न, प्रथमः अंक, पद्य सं०– १
9. प्रियदर्शिका, मिश्रः पण्डित श्रीरामचन्द्र, प्रथमः अंक, पद्य सं०– १
10. रत्नावली, भट्टाचार्य व्रजरत्न, चतुर्थः अंक, भरतवाक्य
11. प्रियदर्शिका, मिश्रः पण्डित श्रीरामचन्द्र, चतुर्थः अंक, भरतवाक्य
12. रत्नावली, भट्टाचार्य व्रजरत्न, प्रियदर्शिका, मिश्रः पण्डित श्रीरामचन्द्र, के सभी अंक
13. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, प्रथमः अंक, पद्य सं०– १
14. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, षष्ठः अंक, भरतवाक्य
15. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, सभी अंक
16. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– ७
17. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना
18. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रायःडॉ० गंगासागर, प्रस्तावना पृ०सं०– ७
19. प्रतिज्ञायौगन्धरायण, रायःडॉ० गंगासागर, प्रस्तावना पृ०सं०– ६–७
20. स्वप्नवासवदत्तम्,रेग्मीः आचार्य श्री शेषराजशर्मा, प्रस्तावना पृ०सं०– १
21. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– १६–१७
22. स्वप्नवासवदत्तम्, त्रिपाठी डॉ० रूपनारायण, प्रस्तावना पृ०सं०– १७–१८
23. रत्नावली, द्विवेदी डॉ० शिवबालक , प्रस्तावना
24. हर्षचरितम्, महाकवि बाणभट्ट,
25. रत्नावली, द्विवेदी डॉ० शिवबालक , प्रस्तावना पृ०सं०– ३७

26. रत्नावली, द्विवेदी डॉ० शिवबालक , प्रस्तावना पृ०सं०– ३७
27. रत्नावली, द्विवेदी डॉ० शिवबालक , प्रस्तावना पृ०सं०– ३७
28. संस्कृत साहित्य का इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी,
29. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, प्रस्तावना
30. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, प्रस्तावना
31. तापसवत्सराजचरितम्, उनियाल प्रो० इन्द्रदत्त, कथावस्तु,
32. संस्कृत साहित्य का इतिहास, कपिलदेव द्विवेदी,